



INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारतीय समाज में जनजातियां : एक साहित्य समीक्षा

डॉ. देवकी मीणा

सहायक आचार्य (समाजशास्त्र विभाग)

सम्राट पृथ्वीराज चौहान राजकीय महाविद्यालय, अजमेर (राजस्थान)।

सारांश - संसार के अन्य क्षेत्रों की भांति भारत में भी जनजातियों का अपना विशिष्ट स्थान है, क्योंकि भारतीय समाज की संरचना में तीन प्रमुख आधार जनजातीय आवास, ग्राम और नगर है। भारतीय समाज के संगठन एवं संरचना को समझने के लिए भारत की मूल निवासी रहें जनजातियों का विस्तृत अध्ययन करना आवश्यक है। शोधकार्य करते समय प्रत्येक शोधकर्ता के लिए उसके अन्वेषण के विषय से संबंधित पूर्ववर्ती साहित्य का अध्ययन अति आवश्यक है। संबंधित साहित्य का अध्ययन किए बिना अनुसंधानकर्ता अपने कार्य में एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता है। शोधकर्ता के लिए अपने अध्ययन विषय से संबंधित अधिकतम जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है। संबंधित साहित्य का अध्ययन करके ही शोधकर्ता अपने अध्ययन की रूपरेखा तैयार कर सकता है, क्योंकि संबंधित साहित्य के अध्ययन से उसे संबंधित क्षेत्र में किए गए कार्य का ज्ञान होता है। इसके अभाव में शोधकर्ता का कार्य दिशाहीन हो जाता है। पूर्व में उपलब्ध साहित्य का अध्ययन अध्ययनकर्ता को एक अंतर्दृष्टि प्रदान करता है, जो कि उसके अध्ययन समस्या के चयन, समस्या के विश्लेषण और व्याख्या में मदद करता है। उपलब्ध साहित्य का अध्ययन शोधकर्ता को निश्चित अध्ययन प्रविधियों का चुनाव कर आंकड़ों के संग्रहण के द्वारा निष्कर्ष निकालने में मदद करता है। संदर्भ साहित्य का अध्ययन शोधकर्ता को विषय को गहराई से समझने में मदद करता है। भारतीय समाज में जनजातियों से संबंधित उपलब्ध साहित्य किसी भी शोध कार्य के लिए सही दिशा प्रदान करेगा।

मुख्य शब्द - जनजाति, साहित्य समीक्षा, उत्तराधिकार, श्रम विभाजन, बंधुता, नक्सलवाद, संस्कृति

प्रस्तावना - समाज में सामाजिक समूह की विभिन्न श्रेणियां पाई जाती है जैसे कबीला, जाति, वर्ग, जनजाति, प्रजाति आदि। इनमें जनजाति की अपनी सामाजिक एवं सांस्कृतिक विशिष्टताएं होती हैं। जिनके आधार पर जनजाति को अन्य समूह से भिन्न किया जा सकता है। सुरजीत सिन्हा ने "जनजाति को एक ऐसा समूह माना है जो ब्राह्मणीय वर्ग- जाति स्तरीकरण की व्यवस्था के अंतर्गत नहीं आते हैं, ये अधिकांशतः जंगलों एवं पहाड़ों में रहते हैं। इनमें स्तरीकरण नहीं पाया गया तथा ये अंतरविवाही समूह होते हैं। सिन्हा के अनुसार ये समूह अपनी आजीविका के लिए कृषि, संग्रहण तथा वन्य संपदा पर निर्भर रहते हैं। जनजाति में सामाजिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से पृथक्करण पाया जाता है तथा इनकी सामाजिक व्यवस्था प्रजातीय परंपराओं द्वारा संचालित होती है।" इसी प्रकार मैडेलबॉम के अनुसार, "संपूर्ण समाज में जनजातीय जीवन की कड़ियां बंधुता पर आधारित हैं। बंधुता सिर्फ सामाजिक संगठन का ही सिद्धांत नहीं है, बल्कि यह उत्तराधिकार, श्रम विभाजन, सत्ता और विशेषाधिकारों के वितरण का सिद्धांत भी है। जनजातीय समाज आकार में छोटे होते हैं। अपने सामाजिक संबंधों के अनुरूप जनजातीय लोगों में अपनी नैतिकता, धर्म और विश्वदृष्टि होती है।" भारत में पाई जाने वाली

विभिन्न जनजातियां प्रजातीय लक्षणों, भाषा, सामाजिक संगठन और सांस्कृतिक प्रतिमान के संदर्भ में एक दूसरे से भिन्न है। लंबे समय तक भारत में पाई जाने वाली जनजातियां समाज की मुख्य धारा से दूर एकाकी जीवनयापन करती रही है। अतः इनके समुचित विकास के लिए जनजातियों का समुचित अध्ययन आवश्यक है जिनके आधार पर हम सही दिशा में उनके समुचित विकास की रूपरेखा तैयार कर उन्हें समाज की मुख्य धारा में शामिल कर सकते हैं। जनजातियों से संबंधित विभिन्न अध्ययन, शोध कार्य किए गए हैं। इनमें से कुछ प्रमुख साहित्य समीक्षा निम्न प्रकार है :

1. जैन एवं त्रिवेदी (1996). "आदिवासी विकास योजनाएं (दशा और दिशा)"- पुस्तक में लेखक ने आदिवासियों की वास्तविक स्थिति के बारे में बताया है। आदिवासियों के लिए संविधान में की गई सुरक्षा एवं सुविधाओं का उच्च एवं मध्यम वर्ग के आदिवासियों ने अधिक लाभ उठाया है, जबकि निम्न वर्ग के आदिवासियों का वर्तमान में भी शोषण हो रहा है। आदिवासियों के ऐतिहासिक एकता को विभिन्न राजनीतिक तथा अन्य आंदोलनों ने ठेस पहुंचाई है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया ने आदिवासियों की सांस्कृतिक विरासत पर नकारात्मक प्रभाव डाला है। पुस्तक में आदिवासियों के एकीकरण के लिए बनाई गई विभिन्न आदिवासी योजनाओं एवं विकास कार्यक्रमों का उल्लेख करते हुए बताया है कि आदिवासी वर्तमान में किस प्रकार परिवर्तन के दौर से गुजर रहे हैं। जहां एक तरफ उनसे जल, जंगल पर अनेक अधिकार छीने जा रहे हैं तो दूसरी ओर वे विकास कार्यक्रमों का पूरा लाभ नहीं उठा पा रहे हैं।

2. नायडू (1997). "भारत के आदिवासी: विकास की समस्याएं" - पुस्तक में भारत के आदिवासियों का सामाजिक, सांस्कृतिक तथा क्षेत्रानुसार विवरण प्रस्तुत किया गया है। आदिवासी और वनों के बीच घनिष्ठ संबंध को दर्शाते हुए वनों से प्राप्त उपज के बारे में बताया है तथा साथ ही यह भी बताया है कि किस प्रकार औद्योगिक विकास के फलस्वरूप आदिवासियों को उनकी भूमि तथा वनों से अलग किया जा रहा है। पुस्तक में आदिवासियों की प्रमुख समस्याओं यथा शिक्षा, ऋण -ग्रस्तता, गरीबी, शोषण, पिछड़ेपन, विस्थापन आदि का विस्तार से विवेचन किया गया है। आदिवासियों की शिक्षा, चिकित्सा, गरीबों की सेवा आदि के नाम पर विदेशी धन का उपयोग आदिवासियों के धर्मांतरण के लिए किया जाता है, का उल्लेख भी लेखक ने किया है। आदिवासियों द्वारा किए गए झारखंड आंदोलन का विवरण देते हुए नक्सलवाद की समस्या का भी विवरण प्रस्तुत किया गया है। आदिवासियों के संदर्भ में गरीबी उन्मूलन के विभिन्न कार्यक्रमों का वर्णन पुस्तक में किया गया है।

3. उप्रेती (2000). " भारतीय जनजातियां: संरचना एवं विकास" - पुस्तक में भारतीय जनजातियों की संरचना एवं विकास के विभिन्न पक्षों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। कुछ प्रमुख जनजातियों का नृजातीय विवरण भी प्रस्तुत किया है। जनजातियों की संस्कृति, राजनैतिक तथा संवैधानिक व्यवस्था, कला, धर्म एवं जादू, नातेदारी व्यवस्था आदि का वर्णन किया है। पुस्तक में जनजातीय समाज में महिलाओं की स्थिति के बारे में बताया है कि आर्थिक गतिविधियों में जनजातीय महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। जनजातीय महिलाओं के परिवार, राजनीतिक तथा धार्मिक एवं संपत्ति संबंधी अधिकारों का उल्लेख भी किया गया है। लेखक ने बताया है कि बदलते परिवेश ने जनजातीय महिलाओं की परंपरागत स्थिति को प्रभावित किया है। पुस्तक में प्रमुख जनजातीय आंदोलन तथा आदिवासी विकास कार्यक्रमों का उल्लेख करते हुए जनजातीय समाज की समस्याओं को बताते हुए उनके समाधान प्रस्तुत किए हैं। साथ ही लेखक ने राजस्थान की प्रमुख जनजातियों का भौगोलिक, जनसंख्यात्मक, सामाजिक- सांस्कृतिक वर्णन किया है और राजस्थान में जनजातीय विकास कार्यक्रमों का उल्लेख किया है।

4. गुप्ता (2003). " जनजातियों का सामाजिक-आर्थिक उत्थान" - लेखिका ने जनजातियों का सामाजिक- आर्थिक उत्थान विषय पर शोधकार्य किया है। प्रस्तुत शोधकार्य में मध्य प्रदेश की सहरिया जनजाति के उत्थान में बैंकिंग क्षेत्र की भूमिका का अध्ययन किया गया है। अध्ययन में पाया गया कि स्टेट बैंक ऑफ़ इंदौर एक वित्तीय संस्था है, जो स्वयं द्वारा संचालित एवं विभिन्न सरकारी विकास योजनाओं को लागू करती है। उन योजनाओं में सहरिया जनजाति के विद्यार्थियों हेतु विभिन्न छात्रवृत्तियां, शैक्षिक ऋण, कृषि ऋण एवं लघु उद्योग के लिए ऋण सुविधा आदि उपलब्ध कराई जाती है। जिसका लाभ सहरिया जनजाति के लोगों को मिला है। अध्ययन में यह भी पाया गया कि अशिक्षा एवं जागरूकता के अभाव में सहरिया जनजाति के लोग पूर्ण रूप से इन योजनाओं का लाभ नहीं उठा पा रहे हैं। अतः जनजातीय लोगों को बैंक से मिलने वाली सहायता के बारे में पूरी जानकारी दी जानी चाहिए।

5. चौहान (2006). " जनजातीय क्षेत्र में शिक्षा की दशा एवं दिशाएं " - चौहान ने राजस्थान के जनजाति क्षेत्र में शिक्षा की दशा एवं दिशाएं विषय पर शोध कार्य किया है। शोध कार्य दक्षिण राजस्थान के जनजाति क्षेत्र में स्वतंत्रता से पूर्व तथा पश्चात् जनजाति की शिक्षा के लिए किए गए विभिन्न प्रयासों का सांगोपांग अध्ययन के साथ-साथ जनजातीय क्षेत्र में शिक्षा के विकास एवं जनजातीय शिक्षा को प्रभावित करने वाले विभिन्न घटकों एवं संबंधित समस्याओं के अध्ययन के उद्देश्य से किया गया है। अध्ययन में पाया गया कि इस जनजातीय क्षेत्र में विशेष शैक्षिक प्रयासों के बावजूद जनजाति में साक्षरता का स्तर न्यूनतम है। इसके प्रमुख कारणों में सामाजिक कुरीतियां, निम्न आर्थिक स्थिति, शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव, नामांकन की कमी तथा इन क्षेत्रों में सेवा देने वाले शिक्षकों में रुचि न होना है। अध्ययन में यह भी पाया गया कि इन क्षेत्रों में आश्रम विद्यालयों की स्थापना जनजातीय लोगों में शिक्षा के प्रति रुचि उत्पन्न करने का एक कारगर उपाय सिद्ध हुआ है। जिसमें और अधिक सुधार की आवश्यकता है।

6. मिश्रा (2008). " भारतीय समाज में जनजाति अवधारणाएं " - पुस्तक में लेखक ने जनजाति अवधारणा को उनकी संस्कृति के संदर्भ में समझने का प्रयास किया है। जनजातीय समाज में प्रचलित विवाह के विभिन्न स्वरूपों तथा कानूनों का विवरण प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक में जनजाति समाज में महिलाओं की स्थिति का आलोचनात्मक विवेचन करते हुए बताया है कि परंपरागत रूप से आदिवासी महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति अच्छी थी, परंतु वर्तमान में बदलते परिवेश में उनकी स्थिति पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। जनजातियों में प्रचलित आर्थिक व्यवस्था का भी उल्लेख किया गया है।

7. कुमार (2007). " जनजातीय समाज में शिक्षा और आधुनिकीकरण " - लेखक द्वारा जनजातीय छात्र-छात्राओं पर आधुनिकीकरण एवं शिक्षा का प्रभाव विषय पर उरांव जनजाति के संदर्भ में शोध कार्य किया गया है। अध्ययन में आधुनिकीकरण की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए उरांव जनजाति की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक पृष्ठभूमि का गहन अध्ययन किया गया है। जनजातीय समाज में शिक्षा और आधुनिकीकरण के बीच द्वंदात्मक संबंधों का अध्ययन किया है। अध्ययन का उद्देश्य जनजातीय छात्र-छात्राओं के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक जीवन तथा परंपरागत मनोवृत्ति पर आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के प्रभावों का अध्ययन करना है। अध्ययन के निष्कर्षों में पाया गया कि आधुनिकीकरण की प्रक्रिया ने जनजातीय छात्र-छात्राओं के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित किया है। आधुनिकीकरण एवं शिक्षा के प्रभावस्वरूप एक तरफ जहां जनजातीय छात्र-छात्राओं के जीवन में राजनीतिक चेतना, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, व्यक्तिगत स्वतंत्रता का विकास हुआ है, वहीं दूसरी ओर आधुनिकीकरण से जनजातीय समाज में सामाजिक सांस्कृतिक विघटन तथा परंपरागत मूल्यों का हास हुआ है।

8. कुमार (2007). " भारत की जनजातीय महिलाएं " - लेखक ने प्रस्तुत आलेख में वर्तमान समय में जनजातीय महिलाओं की वास्तविक स्थिति को उजागर करने का प्रयास किया है। लेखक ने बताया है कि जनजातीय महिलाओं के उत्थान एवं विकास के लिए वर्तमान में अनेक योजनाएं एवं कार्यक्रम क्रियान्वित किए जा रहे हैं, परंतु जनजातीय महिलाओं को इनका संपूर्ण लाभ नहीं मिल पाया है। लेखक ने जनजातीय समाज में व्याप्त अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, अशिक्षा आदि को जनजातीय महिलाओं के विकास में सबसे बड़ी बाधा माना है। आलेख में उजागर किया गया है कि जनजातीय महिलाओं के वास्तविक उत्थान के लिए इस हेतु आयोजित कार्यक्रमों एवं योजनाओं का लाभ उन तक पहुंचाया जाना आवश्यक है।

9. शर्मा (2009). " भारत में सामाजिक संरचना एवं जनजातियां " - प्रस्तुत पुस्तक में भारत की जनजातियों की सामाजिक- सांस्कृतिक संरचना के साथ-साथ जनजातीय समाज के आर्थिक पहलू का विस्तार पूर्वक विवेचन किया गया है। जनजातियों में परिवार, विवाह एवं नातेदारी व्यवस्था के नियमों का वर्णन किया है। जनजाति में प्रचलित आदिम कानून के स्वरूपों तथा स्रोतों के बारे में विस्तार से बताया है। भारत में पाई जाने वाली जनजातियों का वर्गीकरण करते हुए कुछ प्रमुख प्रादेशिक जनजातियों का वर्णन पुस्तक में किया गया है। इसमें जनजातीय महिलाओं की परंपरागत स्थिति का उल्लेख किया है कि प्रत्येक जनजाति में महिलाओं की स्थिति उस जनजाति विशेष के आदर्शों, मूल्यों व परंपराओं पर निर्भर करती है, परंतु विभिन्न जनजातियों में विभिन्नताओं के बावजूद जनजातीय समाज में महिलाओं की स्थिति सभ्य समाज से बेहतर है। लेखिका ने जनजातीय महिलाओं की विभिन्न समस्याओं का भी वर्णन किया है।

10. सिन्हा (2010). "भारतीय आदिवासी" - लेखक द्वारा प्रस्तुत पुस्तक में जनजाति के बारे में विभिन्न लेखों का संपादन किया गया है। पुस्तक में जनजातीय भाषाओं, बोलियों के विकास पर चर्चा करते हुए बताया है कि वर्तमान में किस प्रकार विभिन्न सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तनों का प्रभाव जनजातीय संस्कृति पर पड़ रहा है। जिसके फलस्वरूप जनजातीय सांस्कृतिक विरासत संकट के दौर से गुजर रही है। विभिन्न लेखों के अंतर्गत जनजातियों में प्रचलित लोक कथाओं, नृत्य, जनजातीय आंदोलनों का उल्लेख किया है तथा कुछ जनजातियों जैसे- भील, उरांव, संधाल, झारखंड तथा अरुणाचल प्रदेश की जनजातीय संस्कृति का वर्णन किया है। छोटा नागपुर की आदिवासी महिलाओं की शैक्षिक तथा आर्थिक स्थिति का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन करते हुए बताया है कि आदिवासी महिलाएं अपने शारीरिक एवं बौद्धिक श्रम द्वारा अर्थोपार्जन संबंधी कार्यों में लगी हुई है। आदिवासी महिलाओं के आर्थिक तथा शैक्षिक विकास में सबसे बड़ी बाधा आदिवासी समाज में प्रचलित अंधविश्वास है। वर्तमान में सरकारी तथा गैर सरकारी प्रयासों के फलस्वरूप आदिवासी महिलाएं कामकाजी महिलाओं के रूप में रोजगार के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत है, परंतु उनकी संख्या अभी बहुत कम है और उन्हें अभी लंबी संघर्ष यात्रा करनी है।

11. महाजन (2013). "जनजातीय समाज का समाजशास्त्र " - लेखक ने पुस्तक में जनजाति की अवधारणा, वर्गीकरण, जननांकीय पहलुओं के साथ-साथ जनजातीय समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक, भाषायी, धार्मिक विश्वास, परंपराओं, जादू, नातेदारी आदि का विवरण प्रस्तुत किया है। जनजातीय समाज पर विभिन्न प्रभावों का उल्लेख करते हुए कहा है कि जहां एक ओर जनजातियों में नवीन राजनीतिक चेतना, सामाजिक सुधार आंदोलन, शिक्षा के प्रति जागरूकता, रोजगार के नए अवसरों, आधुनिक जीवन सुविधाओं आदि का प्रसार हुआ है, वहीं दूसरी ओर परिवर्तन के नकारात्मक प्रभावों में नवीन कानून के फलस्वरूप भूमि तथा वनों पर जनजातियों के परंपरागत अधिकार छीने जाना, ऋणग्रस्तता तथा आर्थिक शोषण के कारण बढ़ती गरीबी, जनजातीय विद्रोह, परंपरागत सामाजिक संस्थाओं का पतन आदि के साथ-साथ जनजातीय समाज में महिलाओं की स्थिति में गिरावट आई है। पुस्तक में जनजातीय एकीकरण एवं विकास के लिए किए गए विभिन्न प्रयासों पर प्रकाश डाला गया है।

12. मीना (2013). "आदिवासी विमर्श" - प्रस्तुत पुस्तक में आदिवासियों के अध्ययन से संबंधित विभिन्न आलेखों का संग्रह एवं संपादन किया गया है। वर्तमान में भूमंडलीकरण, आधुनिकीकरण, औद्योगिकीकरण आदि की प्रक्रियाओं ने आदिवासियों में परंपरागत सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक जड़ों से विस्थापन, पलायन, पुनर्वास की समस्याओं को उत्पन्न किया है। आदिवासी संस्कृति वर्तमान में संकट के दौर से गुजर रही है। आदिवासी क्षेत्रों में शोषण, गरीबी, पिछड़ेपन जैसी समस्याओं के कारण नक्सलवाद की जड़ें फैलती जा रही है। आदिवासी महिलाओं से संबंधित किए गए विभिन्न अध्ययनों में यह पाया गया कि कुछ जनजातियों में आदिवासी महिलाएं महिला सशक्तिकरण के पहलुओं को रेखांकित करते हुए एक कर्मठ आदिवासी महिला की छवि को प्रस्तुत करती है, परंतु आदिवासी महिलाएं अभी सशक्तिकरण की दिशा में बहुत पीछे हैं। शहरी व औद्योगिकीकरण के फलस्वरूप आदिवासी महिलाओं का घरेलू कामगार तथा श्रमिक के रूप में शारीरिक एवं आर्थिक शोषण किया जाता है तथा इसका प्रमुख कारण आदिवासी महिलाओं में अशिक्षा तथा जागरूकता की कमी होना है। जनजातीय महिला सशक्तिकरण के लिए आदिवासी महिलाओं को स्वयं अपनी शक्ति तथा सामर्थ्य को पहचान कर आगे बढ़ना होगा।

13. सैनी (2014). " राजस्थान के आदिवासी" - प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने राजस्थान की जनजातियों का विस्तार पूर्वक अध्ययन किया है। पुस्तक में प्रमुख जनजातियों मीणा, भील, गरासिया, सहरिया, डामोर, कथोड़ी आदि के उद्भव पर प्रकाश डालते हुए आदिवासी बहुल क्षेत्र का वर्णन किया गया है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में आदिवासी विकास के लिए आयोजित विभिन्न कार्यक्रमों के बारे में बताते हुए आदिवासियों पर उनके सामाजिक-आर्थिक प्रभावों का उल्लेख किया है। लेखक ने बताया कि विकास योजनाओं से पर्यावरण तथा आदिवासी संस्कृति विपरीत रूप से प्रभावित हुए हैं। वनों के नष्ट होने के कारण आदिवासियों की वनों पर निर्भरता में कमी आने के कारण उनके आर्थिक जीवन पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। लेखक ने आदिवासी महिलाओं के बारे में अध्ययन के दौरान पाया कि जनजातीय महिलाएं अधिक मेहनती होती हैं तथा वे पशुपालन व कृषि कार्यों में पुरुषों के बराबर हाथ बटाती हैं, लेकिन फिर भी उन्हें परिश्रम का पूरा लाभ नहीं मिलता है। साथ ही जनजातीय महिलाओं को सभ्य समाज की महिलाओं की अपेक्षा अधिक स्वतंत्रता प्राप्त है। पुस्तक में आदिवासियों की विभिन्न सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का उल्लेख करते हुए आदिवासियों के

विकास हेतु आवश्यक सुझाव दिए गए हैं। लेखक ने बताया है कि शिक्षा, रोजगार योजनाएं, जन जागृति, आदिवासी संस्कृति का संरक्षण, शोषण से बचाव आदि माध्यमों से आदिवासियों को सुरक्षा प्रदान की जा सकती है।

14. भालेराव एवं धारवाड़कर (2015). " भारतीय जनजातियां: संरचना एवं विकास" - प्रस्तुत पुस्तक में भारतीय समाज में जनजातियों की संरचना एवं नृजातीय विवरण, विवाह, नातेदारी व्यवस्था पर प्रकाश डाला है। जनजातियों में प्रचलित वंश परंपरा, उत्तराधिकार संबंधी कानूनों के साथ-साथ जनजातीय धर्म एवं जादू टोने का उल्लेख किया है। जनजातियों के विकास के लिए की गई संवैधानिक व्यवस्था का विवेचन किया है। जनजातियों में प्रचलित आर्थिक प्रणाली के विवरण के साथ वर्तमान परिदृश्य में आदिवासियों के विस्थापन, पुनर्वास आदि की समस्याओं का विवेचन किया गया है।

निष्कर्ष - भारतीय समाज में जनजातियों से संबंधित अध्ययनों में जनजाति संरचना, परंपरागत संस्कृति, जनजातियों के विकास संबंधी योजनाओं तथा उनके प्रभावों, जनजाति समाज की विभिन्न समस्याओं आदि विभिन्न पक्षों से संबंधित अध्ययन प्रमुख है। निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि भारत में जनजातियां एक अखंडित जन समुदाय नहीं है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक समस्याओं और प्रगति के स्तर के संदर्भ में उनमें अंतर पाए जाते हैं। भारत में कुछ जनजातियां वनों में रहती हैं, कुछ मैदानी भागों में रहती हैं, कुछ स्थायी कृषक हैं तो कुछ वनों की उपज पर निर्भर करती हैं, कुछ जनजातियां आधुनिक समाज के गहरे संपर्क में रही हैं और उन्होंने ईसाइयों, हिंदुओं और अन्य समुदायों की जीवन प्रणालियों को अपना लिया है। इन विभिन्न कारणों से जनजातियों में सामाजिक, राजनीतिक चेतना के स्तर और आर्थिक स्थिति के संदर्भ में अंतर पाए जाते हैं। भारत के संविधान में जनजातियों के सर्वांगीण विकास तथा उत्थान के लिए विभिन्न प्रावधान किए गए हैं। भारत में जनजातियों को समाज की मुख्य धारा का अंग बनाने के लिए जनजातियों के शोषण, भूमि हस्तांतरण, ऋणग्रस्तता पर रोक लगाकर और भारत के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन में जनजातियों की भागीदारी बढ़ाकर उनमें सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन लाने के प्रयास किए गए हैं। कुछ जनजातीय ने अपनी संस्कृति, भाषा, वन उपज पर नियंत्रण आदि अनेक मुद्दों को लेकर विभिन्न आंदोलन भी किए हैं और भारत में इन आंदोलनों के परिणामस्वरूप जनजातियों में सांस्कृतिक और राजनीतिक चेतना में अवश्य ही वृद्धि हुई है, परंतु अभी भी जनजातियों को भारतीय समाज की मुख्य धारा का अंग बनाने के लिए और अधिक प्रयासों की आवश्यकता है।

संदर्भ :

1. शर्मा, के.एल.(2006). भारतीय सामाजिक संरचना एवं परिवर्तन. जयपुर: रावत पब्लिकेशन.
2. सिन्हा, सुरजीत (1980). ट्राइबल्स एंड इंडियन सिविलाइजेशन: ए प्रिस्पेक्टिव मेन इन इंडिया.
3. मेहता, पी.सी. (1993). भारत के आदिवासी. उदयपुर: शिवा पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स.
4. जैन, पी.सी. एवं त्रिवेदी, मधुसूदन (1996). आदिवासी विकास योजनाएं (दशा और दिशा). उदयपुर: शिवा पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स.
5. नायडू, पी.आर.(1997). भारत के आदिवासी: विकास की समस्याएं. नई दिल्ली: राधा पब्लिकेशंस.
6. उप्रेती, हरिशचंद्र (2000). भारतीय जनजातियां: संरचना एवं विकास. जयपुर: राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी.
7. सेतिया, सुभाष (2002). विकास के दौराहे पर खड़ी जनजातीय महिलाएं. कुरुक्षेत्र. वर्ष 48. अंक 02. नई दिल्ली: प्रशासन विभाग.
8. गुप्ता, मंजू (2003). जनजातियों का सामाजिक-आर्थिक उत्थान. दिल्ली: अर्जुन पब्लिशिंग हाउस.
9. चौहान,वाई.एस. (2006). जनजातीय क्षेत्र में शिक्षा की दशा एवं दिशाएं. उदयपुर: अंकुर प्रकाशन.
10. कुमार, मिथिलेश (2007). जनजातीय समाज में शिक्षा और आधुनिकीकरण. नई दिल्ली: क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी.
11. कुमार, कमलेश (2007). भारत की जनजातीय महिलाएं. कुरुक्षेत्र. वर्ष 53. अंक 05. नई दिल्ली: प्रशासन विभाग.
12. मिश्रा, एम.के. (2008). भारतीय समाज में जनजाति अवधारणाएं. जयपुर: श्रुति पब्लिकेशंस.
13. शर्मा, मंजू (2009). भारत में सामाजिक संरचना एवं जनजातियां. जयपुर: राज पब्लिशिंग हाउस.

14. सिन्हा, एल.पी. (2010). भारतीय आदिवासी. इलाहाबाद: जय भारती प्रकाशन.
15. महाजन, धर्मवीर एवं महाजन, कमलेश (2013). जनजातीय समाज का समाजशास्त्र. दिल्ली: विवेक प्रकाशन.
16. मीना, आर.सी. (2013). आदिवासी विमर्श. जयपुर: राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी.
17. सैनी, एस.के. (2014). राजस्थान के आदिवासी. जयपुर: यूनिक्स ट्रेडर्स.
18. भालेराव, एस.पी. एवं धारवाडकर, डी.एस. (2015). भारतीय जनजातियां: संरचना एवं विकास. जयपुर: इशिका पब्लिशिंग हाउस.

